MAH/MUL/03051/2012
ISSN-2319 9318

विद्यावार्ता®

Peer Reviewed International Refereed Research Journal

Issue-34, Vol-02 April to June 2020

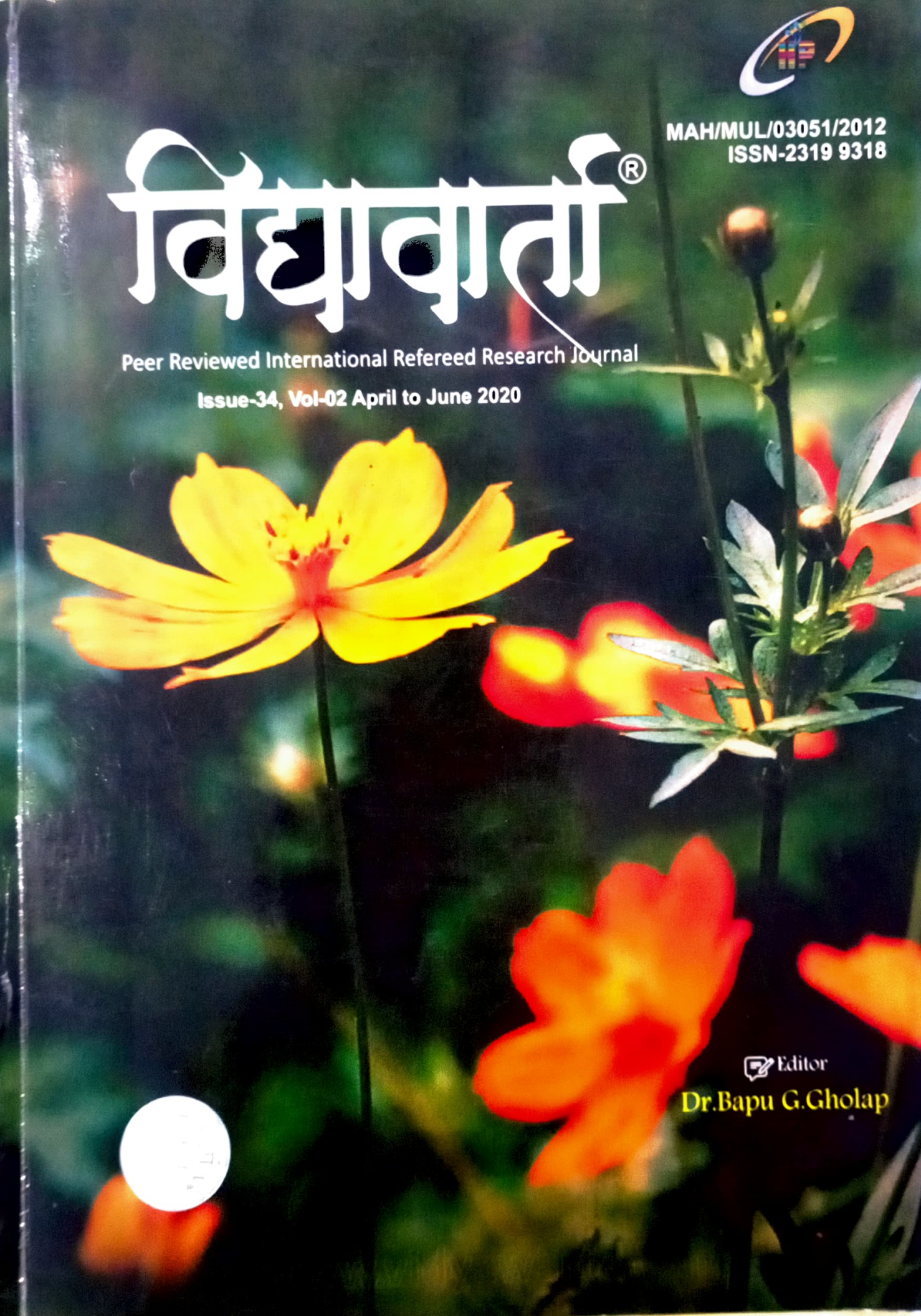

Editor
Dr.Bapu G.Gholap

26) भारतातील विशेष आर्थिक क्षेत्र विषयक धोरण (SEZ Policy in India)
श्री. संदीप भास्करराव जगताप, जि. बुलडाणा (महाराष्ट्र) ||102

27) स्वप्नातिल शिक्षण व्यवस्था [MY DREAM PROJECT]
प्रा. व्यंकट आनंदराव सोळंके, नांदेड ||105

28) नारी सशक्तीकरण और बदलते सामाजिक परिवेश : एक विवेचन
डॉ. कुसुम कुंज मालाकार, गुवाहाटी, असम ||111

29) शिक्षण में मूल्य आधारित पाठक्रम की भूमिका
Dr. Ajai Kumar, Meerut ||116

30) मौर्य साम्राज्य का उद्भव : — एक ऐतिहासिक अध्ययन
डॉ. चंदन कुमार, हजारीबाग ||120

31) कायाकल्प उपन्यास में रोहिणी का चरित्र चित्रण
डॉ. दळवे सूर्यकांत माधवराव, जि. उस्मानाबाद ||122

32) 'धार' उपन्यास में चित्रित आदिवासी जीवन एवं समस्याएँ
डॉ. रमेश संभाजी कुरे, जि. हिंगोली, महाराष्ट्र ||124

33) बाबा भर्तृहरि का भक्ति आंदोलन में योगदान
डॉ. श्रीफूल मीणा & सुरेश कुमार मीणा, जयपुर ||128

34) जांजगीर चाम्पा जिले के हथकरघा कोसा बुनकरों की आर्थिक स्थिति का अध्ययन
डॉ. रमेश कुमार मिश्रा, सारंगढ़, छ०ग० ||138

35) शिक्षण पद्धति एवं साहित्य
जितेन्द्र कुमार शर्मा, हजारीबाग ||141

36) कौटिल्य के विचारों में लोकतांत्रिक व्यवस्था के निहितार्थ
रूपा शेखावत, चूरू ||144

37) त्रिगुणात्मक व्यक्तित्व, सामाजिक मूल्य एवं ए–बी व्यक्तित्व का मैकेविलियन
डा. स्मिता कुमारी, कटिहार ||146

38) शैक्षिक प्रशासन के लिए पोइसकॉर्ब सिद्धान्तों का विद्यालय प्रबन्ध में उपयोग
डॉ.श्रीमती चन्दा तिवाडी & डॉ. इन्दिरा अशोक, जयपुर (राज.) ||150

www.vidyawarta.com/03 — http://www.printingarea.blogspot.com

36

कौटिल्य के विचारों में लोकतांत्रिक व्यवस्था के निहितार्थ

रूपा शेखावत
सह आचार्य — राजनीति विज्ञान,
राजकीय लोहिया महाविद्यालय चूरू

****

सारांश —

प्रजातंत्र शासन व्यवस्था का वह स्वरूप है, जिसके अन्तर्गत जनता की अधिकतम सहभागिता होती है। यह प्रत्यक्ष हो या अप्रत्यक्ष, सम्पूर्ण विश्व में सर्वाधिक लोकप्रिय प्रणाली है, जिसमें जनहितार्थ का लक्ष्य समाहित है। वर्तमान में अधिकांश देशों ने इसी शासन—व्यवस्था को अपना रखा है। लोकतंत्र का अध्ययन व लोकतांत्रिक विचारधारा सम्बन्धी अध्ययन एवं विचार प्राचीन भारतीय चिन्तन में भी उल्लेखित हुए हैं। भारतीय चिन्तन परम्परा में राज्य के दायित्वों को पवित्र माना गया है और इसे दिव्यता के रूप में अंकित किया गया है। दिव्यता का विचार शासक पर नियंत्रणों की आवश्यकता का निषेध नहीं करता अपितु वह शासन पर यह दायित्व आरोपित करता है कि वह अपनी सत्ता का संव्यवहार निर्धारित प्रयोजनों के लिए तथा निर्धारित मर्यादाओं व प्रक्रियाओं के अधीन रहते हुए ही करें। अर्थशास्त्र में इन्हीं विचारों के साथ कौटिल्य ने राजतंत्र व्यवस्था का समर्थन करते हुए भी अप्रत्यक्ष रूप से लोकतंत्र के पक्ष में निहितार्थ प्रकट किया है। प्रस्तुत शोध—पत्र में शासक पर संस्थागत नियंत्रण, व्यावहारिक व प्रक्रियात्मक नियंत्रण तथा नैतिक नियंत्रण के साथ—साथ जनता व जनमत नियंत्रण के कौटिल्य के विचारों के आधार पर लोकतंत्र के निहित विचार को उल्लेखित करने का प्रयास किया गया है।

मुख्य शब्द —लोकतंत्र, शासन—व्यवस्था, संस्थागत नियंत्रण, जनमत, दायित्व, प्रक्रियात्मक।

उद्देश्य —

प्राय: यह समझा जाता है कि आचार्य कौटिल्य निरकुंश राजतंत्र के हिमायती थे, लेकिन ऐसा नहीं है। कौटिल्य राजतंत्र के समर्थक थे, परन्तु निरंकुशता के नहीं। कौटिल्य के अर्थशास्त्र में वर्णित राजा अत्याचारी नहीं है; वह निष्पक्ष, न्यायप्रिय, पूर्वाग्रह रहित, प्रजावत्सल व दुष्टों के लिए कठोर है। अर्थशास्त्र में राज्य की सभी संस्थाएं भी प्रजातांत्रिक है। प्रस्तुत शोध—पत्र का उद्देश्य यही दर्शाना है कि कौटिल्य एक ऐसे राजनीतिज्ञ थे, जिनकी प्रजातांत्रिक मूल्यों में आस्था थी।

प्रस्तावना —

चाणक्य द्वारा रचित सूत्र सरल एवं संश्लेषणात्मक रूप में है। कौटिल्य द्वारा रचित सूत्र में विविध सन्दर्भों की व्याख्या की गयी है, जिसमें कई सूत्र लोकतांत्रिक व्यवस्था के लिए निहितार्थ रखते हैं। प्रस्तुत पत्र में कौटिल्य के इन्हीं सूत्रों में लोकतंत्र के निहितार्थ को प्रकट करने का प्रयास किया गया है। कौटिल्य के अनुसार —

एकांग दोष : पुरुषयवसादयति। चाणक्य सूत्रम् १९०। अर्थात् एक अंग के दोषपूर्ण होने से मनुष्य की क्षमता क्षीण हो जाती है अर्थात् भारतीय संविधान में शासन के तीनों अंगों के सन्दर्भ में भी इसका आशय ले सकते हैं कि व्यवस्थापिका, कार्यपालिका एवं न्यायपालिका तीनों में से यदि एक अंग की कार्यक्षमता क्षीण हो जाए तो सम्पूर्ण राष्ट्र की क्षमता प्रभावित होगी।

स्वजनस्य दुर्वृत्तं निवारयेत्।

अर्थात् अपने जनों के दुराचार का निवारण करना चाहिए। राज्य में शासन करने वाले का एक ही उद्देश्य है देश तथा राष्ट्र का कल्याण एवं उन्नति।

इस तरह चाणक्य सूत्र १७२ के अनुसार विक्रमधना राजान अर्थात् विक्रम ही राजा का धन है। विक्रम के अन्तर्गत जनहित कार्य साधन का पराक्रम, बुद्धि—चरित्र, बल, विपक्ष के प्रति शौर्य आदि गुणों को सम्मिलित किया गया है।

कौटिल्य ने शासक के गुणों का उल्लेख करते हुए कहा है राजा या शासक जितेन्द्रिय, धर्मपरायण

एवं सर्वत: योग्य होना चाहिए। ऐसा शासक ही निर्मम एवं निष्पक्ष कार्य व स्वस्थ मानसिकता से मशविरा करने वाले लोगों को ही महत्वपूर्ण पदों पर नियुक्त करेगा। क्योंकि राजकार्य में निर्णय लेने से पहले शासक को अपने योग्य मन्त्रियों एवं सहायकों की सलाह लेनी चाहिए। कौटिल्य का शासक निरकुंश नहीं हो सकता क्योंकि उस पर अनेक तरह के प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष नियंत्रण की व्यवस्था की गयी है। कहीं–कहीं तो कौटिल्य के विचारों में यह प्रतीत होता है कि वे राजतंत्र के स्थान पर लोकतंत्र को ही स्पष्ट करना चाह रहे हैं। शासक निरकुंश न हो इस हेतु कौटिल्य ने शासन–व्यवस्था पर कई प्रकार के नियंत्रण व प्रतिबंधों की चर्चा की है जो निश्चित रूप से लोकतंत्र–शासन की भावना की तरफ झुकाव दृष्टिगोचर होता है। कौटिल्य द्वारा शासन–व्यवस्था पर जिन परिस्थितियों में नियंत्रण की बात कही है उन्हें निम्न प्रकार उल्लेखित किया जा सकता है –

(i) संस्थागत नियंत्रण – कौटिल्य ने शासक पर मंत्रिपरिषद् तथा अन्य शासकीय अधिकारियों के माध्यम से नियंत्रण का समर्थन किया है। आचार्य का मानना है कि मंत्रिपरिषद् से मंत्रणा प्राप्त करना शासक के लिए अत्यावश्यक है। शासक को चाहिए कि शासन कार्यों में सहायतार्थ सुयोग्य मंत्रियों की नियुक्ति करें तथा उनके परामर्शों को हृदयांगम् करें। राजा को पुरोहित का उसी प्रकार अनुगामी होना चाहिए जैसे शिष्ट–आचार्य का, पुत्र–पिता का और सेवक स्वामी का अनुगामी बना रहता है। आचार्य का कहना है कि राजा को मंत्रियों से परामर्श करने के पश्चात् ही कार्य प्रारम्भ करना चाहिए।

मंत्रिपरिषद् व मंत्रियों से परामर्श का कार्य अत्यन्त महत्वपूर्ण है, जिसकी अवहेलना करना शक्तिशाली राजा के लिए भी सुगम न था, अन्यथा जनता के असन्तोष और राज्य के अहित का भय रहता था। पर–राष्ट्रों से सम्बन्ध तथा वैदेशिक मामलों में भी सलाह अत्यावश्यक है। स्थानीय प्रशासन के सन्दर्भ में भी शासक के अधिकार असीमित नहीं थे और प्रशासन में विकेन्द्रीकरण की व्यवस्था लोकतंत्र के निहितार्थ को स्पष्ट दर्शाती है।

(ii) प्रक्रियात्मक एवं व्यावहारिक नियंत्रण – इसमें दण्ड व्यवस्था, न्याय व्यवस्था, आर्थिक प्रशासन अर्थात् करारोपण का समावेश किया जा सकता है। शासक का अस्तित्व ही प्रजा रक्षण के लिए है। मात्स्य न्याय की स्थिति खत्म करने के लिए ही राजा को अधिकार एवं दण्ड शक्ति प्रदान की गई थी। दण्ड शक्ति के भय से ही समाज में सुख–शान्ति और व्यवस्था कायम रहती है। राजा को दण्ड का प्रयोग न्यायपूर्ण तथा उचित तरीके से करना चाहिए क्योंकि तीक्ष्ण दण्ड से प्रजा उखड़ सकती है। अत: जन रक्षा के लिए दण्ड का उचित व न्यायपूर्ण प्रयोग करें।

कर व्यवस्था के सम्बन्ध में राजा से न्यायपूर्ण कर प्राप्ति का अनुरोध किया गया है। फल, फूल, शाक, मूल, धान्य, सूखी मछली, मांस आदि पर लागत का छठा हिस्सा चुंगी के रूप में एवं शंख, हीरा, मणि, मुक्ता आदि मूल्यवान वस्तुओं की चुंगी उनके विशेषज्ञों, पारखियों अथवा विशिष्ट व्यक्तियों द्वारा निर्धारित किए जाये। धन के अनावश्यक संचयन एवं कर–व्यवस्था के नियमों का उल्लंघन कर प्रजा का शोषण व उत्पीड़न नहीं किया जाए।

(iii) जनता एवं जनमत का नियंत्रण – अर्थाशास्त्र में यत्र–तत्र जनता द्वारा भी राजा पर नियंत्रणों द्वारा उसकी स्वेच्छाचारिता पर अंकुश लगाने का प्रावधान है। प्राचीन भारत में राजा को प्रजा रक्षक, प्रजा पालक, प्रजा–पिता, सेवक, प्रजा के हितों का रक्षक समझा जाता था, अत: राजा स्वेच्छाचारी नहीं हो सकता। राजा को सदैव जनभावना का ध्यान रखना चाहिए। राजा से अपेक्षा की जाती है कि वह सदैव लोकप्रिय नीतियों को ही अपनाएं। कौटिल्य के अनुसार प्रजा के सुख में राजा का सुख, प्रजा के हित में राजा हित समाहित है। राज्याभिषेक के समय शासक को प्रथम शपथ राष्ट्रहित और प्रजा हित की कामना को हुआ करती थी। इस प्रकार अर्थशास्त्र के प्रतिपादित शासक के स्वरूप व शासकीय व्यवस्था के आयामों का अध्ययन इस तथ्य का प्रमाण है कि अर्थशास्त्र शासक के लोक कल्याणकारी, अनुशासित एवं मर्यादित स्वरूप का प्रतिपादन करता है।

निष्कर्ष :–

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि कौटिल्य ने अर्थशास्त्र में शासक के जिस मर्यादित आचरण की व्याख्या की है वह निश्चित रूप से जनहित व जन कल्याण की भावना पर आधारित है। वर्तमान में लोकतंत्र शासन व्यवस्था में जो दोष है उन्हें दूर करने के लिए कौटिल्य द्वारा प्रस्तुत किए गए विचारों को अपनाने की आवश्यकता प्रतीत होती है। यदि जिन लोगों के हाथ में सत्ता है वे मर्यादित आचरण व जन–कल्याण को प्राथमिक उद्देश्य स्वीकार करें तो स्वस्थ लोकतंत्र का रूप हमारे समक्ष विद्यमान होगा। सभी नेता यथार्थत: जनप्रिय नेता हो सकते हैं एवं प्रजातंत्रीय मर्यादाओं के अनुरूप शासन व्यवस्था स्थापन में मदद मिल सकती है। राजा की दिव्यता के चित्रण के साथ–साथ मर्यादित व्यवहार एवं प्रजा की भावनाओं एवं हितों के लिए कार्य करने का उद्देश्य तथा विभिन्न नियंत्रकों के माध्यम से शासकीय पद व व्यवस्था का विवेचन लोकतंत्र की शुद्ध छवि व स्वरूप प्रकट करने वाला है। अत: कौटिल्य के वर्णित विचारों में लोकतंत्र के आधार–स्तम्भों पर प्रकाश डालने का प्रयास प्रस्तुत शोध–पत्र में रहा है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची –

१. आसोपा प्रो. लक्ष्मीनारायण, जोशी डॉ. राजकुमार, शर्मा डॉ. सीताराम– संस्कृत वाड़मय के लोकतंत्र

२. चतुर्वेदी मधुकर श्याम – प्राचीन भारतीय राजनीतिक विचारक

३. शेखावत रूपा – प्राचीन भारतीय चिन्तन में राज्य की प्रकृति (लघु शोध प्रबन्ध)

४. चारण डॉ. दिनेश कुमार – कौटिल्य के अर्थशास्त्र का राजनीतिक एवं सांस्कृतिक अध्ययन

५. विद्याभास्कर गमावतार – चाणक्य सूत्र संग्रह

६. आचार्य दीपंकर – कौटिल्य कालीन भारत।

❑❑❑